कोशिकाओं की मृत्यु ज़रूरी है .....जीवन के लिए

सुशील जोशी

यह तो सभी जानते हैं कि बहु-कोशिकीय जीवों का निर्माण कोशिकाओं के विभाजन के फलस्वरूप होता है। यही क्रिया एक-कोशिकीय जन्तुओं में भी होती है मगर विभाजन के बाद बनी दोनों कोशिकाएँ एक-दूसरे से स्वतंत्र हो जाती हैं और दो स्वतंत्र जीवों की तरह जीती हैं। मगर बहुकोशिकीय जीवों में विभाजन के बाद कोशिकाएँ उसी जीव का अंग बनी रहती हैं। इस बहुकोशिकीय जीव के रख-रखाव के लिए सर्वथा नई व्यवस्थाओं का निर्माण हुआ है। उनमें से एक है कोशिकाओं के बीच संवाद; तभी तो वे मिल-जुलकर तालमेल से काम कर पाएँगी। इसके अलावा एक और व्यवस्था का निर्माण हुआ है जिसे सुव्यवस्थित कोशिका मृत्यु या प्रोग्राम्ड सेल डेथ कहते हैं। यह क्रिया एक-कोशिकीय जीवों में नहीं होती, परन्तु बहुकोशिकीय जीवों में अनिवार्य रूप से होती है।

ऐसा नहीं है कि एक-कोशिकीय जीव मरते ही नहीं। मगर वे किसी विष या पोषण के अभाव या किसी अन्य तनाव के चलते मरते हैं। उनमें ऐसी कोई आन्तरिक व्यवस्था नहीं होती कि कोशिका की मृत्यु हो। दूसरी ओर, बहुकोशिकीय जीवों में सारी बाह्य परिस्थितियाँ जीवन के अनुकूल होने के बावजूद कोशिकाओं की मृत्यु निरन्तर चलती रहती है। एक अनुमान के मुताबिक मानव शरीर में कोशिका विभाजन के फलस्वरूप प्रति सेकण्ड एक लाख कोशिकाओं का निर्माण होता है, और लगभग इतनी ही कोशिकाएँ मृत्यु को प्राप्त होती हैं।

किसी चोट या विष या तनाव के असर से जब कोशिका मृत्यु होती है तो उसे नेक्रोसिस कहते हैं जबकि आन्तरिक कारणों से होने वाली व्यवस्थित कोशिका मृत्यु को एपोप्टोसिस का नाम दिया गया है। दोनों में कुछ बुनियादी अन्तर हैं। इनके अन्तर में जाने से पहले यह देखते हैं कि बहुकोशिकीय सजीवों के जीवन में इस व्यवस्था का क्या महत्व है।

एपोप्टोसिस - कुछ उदाहरण

जिन लोगों ने जीव विज्ञान के

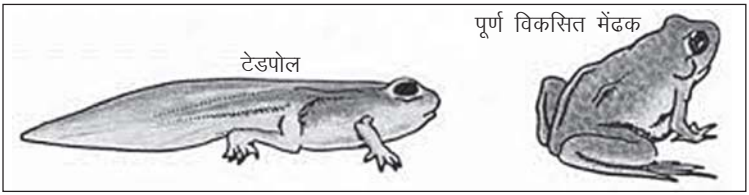

प्रयोग किए हैं, वे मेंढक के जीवन चक्र से परिचित होंगे। मेंढक के अण्डों से मेंढक नहीं निकलते। इनमें से जो जन्तु निकलते हैं, वे काफी अलग दिखते हैं। इन्हें टेडपोल कहते हैं। इनकी पूँछ होती है, टाँगें नहीं होतीं, साँस लेने के लिए गलफड़े होते हैं। इन टेडपोल्स का धीरे-धीरे विकास होता है। विकास के दौरान टाँगें विकसित होती हैं, तो हम कह सकते हैं कि यह काम नई कोशिकाएँ बनने के फलस्वरूप होता है। मगर मेंढक बनने की क्रिया में टेडपोल की पूँछ गायब हो जाती है। वह पतझड़ में पत्तियों के झड़ने समान झड़ती नहीं, बल्कि अन्दर-ही-अन्दर सोख ली जाती है। यह काम एपोप्टोसिस की बदौलत होता है।

मनुष्य के भ्रूण के विकास के दौरान भी एपोप्टोसिस महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भ्रूण के हाथ-पैरों में उँगलियों के बीच खाली स्थान नहीं होता, उँगलियों के बीच एक जाल-सा फैला होता है। विकास के दौरान उँगलियों के बीच की कोशिकाएँ एपोप्टोसिस के ज़रिए नष्ट की जाती हैं और उँगलियाँ अलग-अलग हो जाती हैं। इसी प्रकार से मानव भ्रूण में लैंगिक अंगों के विकास में भी एपोप्टोसिस अहम भूमिका निभाता है। यानी जहाँ कोशिका निर्माण शरीर की रचना का

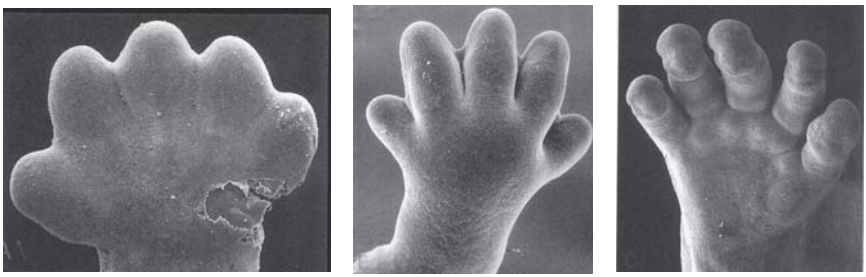

उँगलियों का विकासः छठवें सप्ताह तक उँगलियाँ छोटे-छोटे उभारों के रूप में दिखने लगती हैं। सातवें सप्ताह में उँगलियों के बीच की कोशिकाओं में एपोप्टोसिस शुरू हो जाता है और आठवें सप्ताह तक उँगलियाँ पूरी तरह अलग-अलग हो जाती हैं।

कच्चा माल (मिट्टी) उपलब्ध कराता है, वहीं एपोप्टोसिस उसे तराशने का काम करता है।

सबसे पहले जर्मन वैज्ञानिक कार्ल फोग्ट ने 1842 में एपोप्टोसिस का वर्णन किया था और वॉल्टर फ्लेमिंग ने 1885 में इसका बारीक विवरण प्रस्तुत किया था। मगर एपोप्टोसिस और चोटग्रस्त कोशिका मृत्यु के बीच स्पष्ट भेद करने का काम 1965 में जॉन फॉक्सटन रॉस केर ने किया। तब से कई वैज्ञानिकों ने इस प्रक्रिया का अध्ययन किया है।

तो, एपोप्टोसिस का महत्व सजीवों के परिवर्धन में है। जैसे मानव मस्तिष्क के निर्माण के दौरान जब तंत्रिकाओं के बीच कड़ियाँ जुड़ती हैं तो लगभग आधी तंत्रिकाओं की मृत्यु ज़रूरी होती है क्योंकि ज़रूरत से बहुत ज़्यादा तंत्रिकाओं का निर्माण हो जाता है।

क्यों ज़रूरी है एपोप्टोसिस?

यह प्रक्रिया कई अन्य दृष्टियों से भी महत्वपूर्ण है। जैसे, ऊपर हमने देखा कि सामान्यतः मनुष्य के शरीर में प्रति सेकण्ड एक लाख कोशिकाओं का निर्माण होता है। ये सारी कोशिकाएँ जीवित रहें तो शरीर की हालत पतली (या कहें, मोटी) हो जाएगी। इसलिए एक लाख कोशिकाएँ मृत्यु का वरण करती हैं।

बहुकोशिकीय जीवों में एपोप्टोसिस की ज़रूरत एक अन्य कारण से भी होती है। इसका सम्बन्ध उन क्षतिग्रस्त या संक्रमित कोशिकाओं को नष्ट करने से है जो पूरे जीव के लिए खतरा बन सकती हैं।

जैसे, हमारे शरीर में कई बार वायरस का संक्रमण होता है। वायरस की एक विशेषता यह होती है कि वह कोशिकाओं के अन्दर घुसकर बैठ जाता है। ऐसे में हमारे प्रतिरक्षा तंत्र के लिए वायरस को मार गिराना सम्भव नहीं रहता। ऐसी वायरस संक्रमित कोशिकाओं को मारना होता है। इसका एक तरीका टी-लिम्फोसाइट (श्वेत रक्त कोशिका समूह का एक सदस्य) द्वारा एपोप्टोसिस है।

इसी प्रकार से जब हमारे प्रतिरक्षा तंत्र द्वारा बनाई गई प्रतिरक्षा कोशिकाएँ अपना काम कर चुकी होती हैं, तो इन्हें हटाना होता है। यदि ऐसा न किया जाए, तो ये अपने ही शरीर के अंगों पर हमला बोल देती हैं। जैसे यह देखा गया है कि उपरोक्त टी-लिम्फोसाइट एक-दूसरे में और स्वयं में एपोप्टोसिस को अंजाम देती हैं। एपोप्टोसिस व्यवस्था में खामी रह जाए, तो आत्म-प्रतिरक्षी रोग (जैसे गठिया - रुमेटॉइड आर्थ्राइटिस) की आशंका बढ़ जाती है।

वैसे तो सभी केन्द्रक-युक्त (यूकेरियोटिक) कोशिकाओं में डीएनए की मरम्मत की व्यवस्था होती है मगर कई बार डीएनए में हुई क्षति की मरम्मत नहीं हो पाती। ऐसी कोशिकाएँ जन्मजात विकृतियों का कारण बन जाती हैं। ऐसी कोशिकाएँ कई बार

बहुकोशिकीय जीवों के चार तत्व

विभेदन: वास्तविक बहुकोशिकीय जीवों में कोशिकाएँ स्थाई रूप से विशेषीकृत (विभेदित) हो जाती हैं।

पॉलीमॉर्फिक सन्देशों के ज़रिए संवाद: बहुकोशिकीय जीवों की कोशिकाएँ डीएनए के माध्यम से कदापि परस्पर संवाद नहीं करतीं। उनमें सन्देशों का आदान-प्रदान सन्देशवाहक अणुओं के माध्यम से होता है। इन सन्देशों का अर्थ प्रेषक कोशिका द्वारा नहीं बल्कि ग्राही कोशिका द्वारा निर्धारित होता है।

कोशिका-बाह्य संरचनाएँ: किसी भी बहुकोशिकीय जीव की पहचान उसकी बाह्य संरचनाओं द्वारा होती है। बहुकोशिकीय जीव और बायोफिल्म्स (सूक्ष्मजीवों का गुच्छ) कोशिका से बाहर संरचनाएँ बनाते हैं (जैसे संयोजी ऊतक, हड्डियाँ, कवच वगैरह)। इसका मतलब है कि ऐसे जीवों का 'स्व' कोशिका के अलावा कोशिका-बाह्य संरचनाओं से भी निर्धारित होता है।

एपोप्टोसिस: हर स्वस्थ बहुकोशिकीय कोशिका खुदकुशी करने को तैयार रहती है। एपोप्टोसिस एक बहुकोशिकीय परिप्रेक्ष्य है जिसमें एक-एक कोशिका समूचे बहुकोशिकीय जीव के भले के लिए कुरबान होने को तत्पर है। ऐसा माना जाता है कि एपोप्टोसिस का विकास डीएनए प्रतिलिपिकरण में होने वाली त्रुटियों, वायरस संक्रमण तथा अविभेदित दुष्ट कोशिकाओं से निपटने के लिए हुआ है; मगर जीव इसका उपयोग अपनी आकृति तराशने में भी करते हैं।

बेलगाम विभाजन करने लगती हैं और कैंसर का रूप ले सकती हैं। देखा गया है कि इस तरह की कोशिकाओं में एक प्रोटीन पी-53 का उत्पादन बढ़ जाता है जो एपोप्टोसिस को उकसाने वाला पदार्थ है।

इस सारे विवरण से इतना तो स्पष्ट है कि एपोप्टोसिस बहुकोशिकीय जीवों के जीवन में अत्यन्त महत्वपूर्ण क्रिया है। कई वैज्ञानिक तो इसे बहुकोशिकीय जीवों का एक अनिवार्य लक्षण मानते हैं। बल्कि यहाँ तक कहा जाता है कि यदि एपोप्टोसिस का विकास न हुआ होता तो बहुकोशिकीय जीवों का अस्तित्व सम्भव न होता। कई ऐसे एक-कोशिकीय जीवों में भी एपोप्टोसिस जैसी क्रिया देखी गई है जिनमें जीवन-चक्र की किसी अवस्था में कोशिकाएँ आपस में जुड़कर बहुकोशिकीय समूह बनाती हैं।

हमने ऊपर कहा था कि नेक्रोसिस और एपोप्टोसिस में काफी फर्क होता है। अब उसी की बात करते हैं और फिर एपोप्टोसिस की क्रियाविधियों पर कुछ चर्चा करेंगे।

नेक्रोसिस और एपोप्टोसिस

नेक्रोसिस और एपोप्टोसिस के बीच

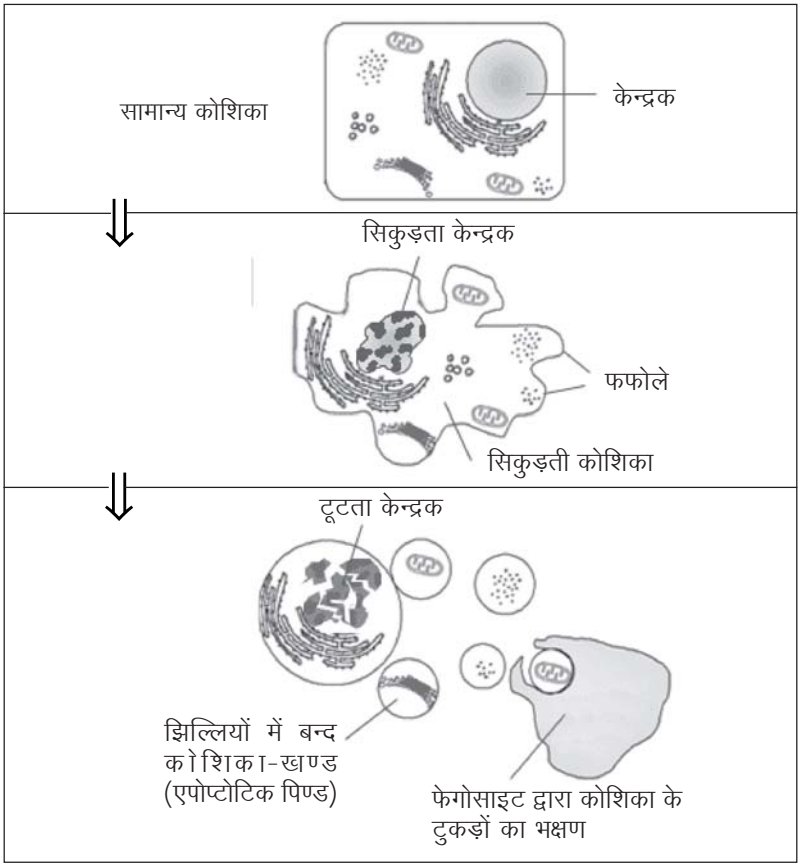

एपोप्टोसिस में कोशिका सिकुड़ती है, उसका आकार बिगड़ता है, आस-पास की कोशिकाओं से सम्पर्क टूट जाता है और फैगोसाइट इस कोशिका को खाकर इसे समाप्त कर देते हैं।

सबसे स्पष्ट अन्तर तो दोनों क्रियाओं के दौरान होने वाले आकारिकीय परिवर्तनों से है। मोटे तौर पर कहें, तो नेक्रोसिस के दौरान कोशिका व उसके विभिन्न उपांग फूल जाते हैं और झिल्लियाँ फट जाती हैं। तब कोशिका के अन्दरूनी पदार्थ आस-पास अनियंत्रित ढंग से फैल जाते हैं। इसकी वजह से उस ऊतक में सूजन व तकलीफ पैदा होती है।

दूसरी ओर, एपोप्टोसिस के दौरान जो क्रियाएँ होती हैं, वे एकदम अलग हैं। एपोप्टोसिस के दौरान कोशिका सिकुड़ती है, उसकी आकृति बिगड़

जाती है, आस-पास की कोशिकाओं से उसका सम्पर्क समाप्त हो जाता है। उसका क्रोमेटिन* भी सिकुड़ता है और केन्द्रक झिल्ली से चिपक जाता है। ऐसी कोशिका की झिल्ली पर कुछ फफोले से उभर आते हैं और अन्ततः कोशिका छोटे-छोटे टुकड़ों में बँट जाती है। ये टुकड़े झिल्लियों में बन्द होते हैं। इसके बाद इन टुकड़ों को कोशिका-भक्षी कोशिकाएँ (फेगोसाइट्स) निगल लेती हैं और कोई पदार्थ आस-पास नहीं बिखरता। लिहाज़ा, आस-पास कोई सूजन वगैरह भी पैदा नहीं होती।

इससे स्पष्ट है कि एपोप्टोसिस वह क्रिया नहीं है जिसमें कोशिका को तहस-नहस किया जाता है। यह तो एक ऐसी प्रक्रिया है जो कई सुव्यवस्थित चरणों में सम्पन्न होती है और इसे सम्पन्न करवाने के लिए कई सारे एंज़ाइम भी होते हैं।

एपोप्टोसिस की क्रियाविधि

क्रियाविधि के स्तर पर देखा जाए, तो दरअसल हर कोशिका हर समय जीने-मरने को तैयार होती है। वह जीएगी या मरेगी, यह उसे मिलने वाले संकेतों पर निर्भर करता है। इन्हें हम सकारात्मक और नकारात्मक संकेत कह सकते हैं। सकारात्मक संकेत वे हैं जो कोशिका के जीवित बने रहने के लिए ज़रूरी हैं और नकारात्मक संकेत वे हैं जो उसे आत्महत्या करने का निर्देश देते हैं।

कोशिका का जीवन तब खतरे में पड़ जाता है जब या तो सकारात्मक संकेत मिलने बन्द हो जाएँ या नकारात्मक संकेत मिलने लगें। आम तौर पर सकारात्मक संकेत अन्य कोशिकाओं से या उस सतह से मिलते हैं जिस पर वह कोशिका टिकी हुई है। यदि अन्य कोशिकाओं से या उस सतह से सम्पर्क टूट जाए तो सकारात्मक संकेत मिलना बन्द हो जाते हैं और कोशिका एपोप्टोसिस के लिए तैयार हो जाती है।

नकारात्मक संकेतों में सबसे प्रमुख है किसी कोशिका में ऑक्सीकारकों का अत्यधिक जमावड़ा। इसके अलावा पराबैंगनी किरणें, एक्स किरणें और कुछ कीमोथेरपी दवाइयाँ भी कोशिका के डीएनए को क्षति पहुँचाती हैं और नकारात्मक संकेत का काम करती हैं। इसके अलावा यदि कोशिका में ऐसे प्रोटीन्स की मात्रा बढ़ जाए जो ठीक तरह से फोल्ड न हो पाए हों, तो भी एपोप्टोसिस की स्थिति बन सकती है। कुछ ऐसे अणु होते हैं जो कोशिका की बाहरी सतह पर चिपककर एपोप्टोसिस की शुरुआत करते हैं। इनमें कैंसर कोशिकाओं को पहचानने वाले अणु या वायरस संक्रमित कोशिकाओं को पहचानने वाली कोशिकाएँ शामिल हैं।

आप देख ही सकते हैं कि

** क्रोमेटिन कोशिका के केन्द्रक में मौजूद डीएनए और प्रोटीन का संयोजन है। इसका प्राथमिक कार्य डीएनए को उपलब्ध स्थान में पैक करके रखना है।*

एपोप्टोसिस तीन तरह से हो सकता है: एक, जो कोशिका के अन्दर से ही शुरू होता है, दूसरा, जो कोशिका सतह पर मृत्यु निर्देशक पदार्थों के चिपकने पर शुरू होता है, और तीसरा वह जो क्रियाशील ऑक्सी-पदार्थों द्वारा शुरू किया जाता है। इन तीनों के द्वारा शुरू की गई क्रियाविधियाँ अलग-अलग रास्तों से कोशिका को सुरक्षित मृत्यु तक ले जाती हैं। उन रास्तों का पता मूलतः एक कृमि पर किए गए अध्ययनों से मिला है। मज़ेदार बात यह है कि ये रास्ते छोटे-मोटे संशोधनों के साथ स्तनधारियों समेत सभी बहुकोशिकीय जन्तुओं में पाए जाते हैं। इससे पता चलता है कि जैव-विकास की प्रक्रिया में एपोप्टोसिस और उसके मार्ग संरक्षित रहे हैं।

कुल मिलाकर एपोप्टोसिस की प्रक्रिया का बहुकोशिकीय सजीवों के जीवन में काफी महत्वपूर्ण स्थान है। जैसा कि हमने देखा, यह प्रक्रिया सजीवों के परिवर्धन, विभेदन, शरीर के सन्तुलन के रख-रखाव, प्रतिरक्षा तंत्र के नियमन व कामकाज और हानिकारक कोशिकाओं का सफाया करने में मददगार है। यह प्रक्रिया ठीक से न चले तो कई व्याधियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। एपोप्टोसिस में गड़बड़ी कैंसर, आत्म-प्रतिरक्षा रोगों और वायरस के प्रसार का सबब बन सकती है। दूसरी ओर, यदि एपोप्टोसिस अतिसक्रिय हो जाए तो इसके परिणाम तंत्रिका क्षति रोगों (जैसे पार्किन्सन, एल्ज़ाइमर वगैरह) तथा एड्स के रूप में सामने आ सकते हैं।

सुशील जोशी: एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

यह लेख 'स्रोत' पत्रिका के अंक अगस्त, 2011 से साभार।